# शिक्षा : दिव्यांगजनों के विशेष सन्दर्भ में

**डॉ0 विजय कुमार वर्मा,**

प्रवक्ता–समाजशास्त्र विभाग,

डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ

## शोध सारांश

*दिव्यांगता की समस्या लगभग उतनी ही प्राचीन है–जितनी प्राचीन है मानव–सभ्यता। आदि काल में वन में रहने वाले मनुष्य जंगल की आग, तूफान या वनैले पशुओं का शिकार होकर दिव्यांग हो जाते थे। समय के साथ मनुष्य ने ज्यों–ज्यों अपनी सुरक्षा के साधन बनाये त्यों–त्यों आबादी बढ़ने के साथ सीमित साधनों के लिये होने वाले झगड़ों के कारण मनुष्य का दिव्यांग होना जारी रहा। मनुष्य ज्यों–ज्यों साधन सम्पन्न होता गया, त्यों–त्यों अपने लिए सुरक्षा, इलाज आदि के साथ ढूँढ़ता चला गया, पर दिव्यांगता की समस्या ने पीछा नहीं छोड़ा और आज भी सैम्पल सर्वे के अनुसार विश्व में 50–60 करोड़ दिव्यांग व्यक्ति हैं। ये व्यक्ति विभिन्न प्रकार की शारीरिक, आर्थिक और सामाजिक यातना भोग रहे हैं। इनकी आबादी कुल विश्व की आबादी की लगभग 10 प्रतिशत है। इन लोगों के परिवारजनों और आश्रितों को भी अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं और इस प्रकार दिव्यांगता से सीधे तौर पर प्रभावित जनसंख्या लगभग 25 प्रतिशत है। इनमें से 70 प्रतिशत ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में रह रहे हैं और गरीबी रेखा से काफी नीचे जीवनयापन कर रहे हैं। इन्हें अनेक प्रकार के भौतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अभावों का सामना करना पड़ रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सरकारी प्रयासों एवं आमजन की जागरूकता के कारण दिव्यांगों के लिए शिक्षा की व्यवस्था हो रही है। हर प्रकार की दिव्यांगता के शिकार व्यक्तियों को उनकी दिव्यांगता के अनुरूप विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती है। प्रारम्भ में विशेष शिक्षा की आवश्यकता बहुत ज्यादा होती है। एक बार शिक्षा का स्तर प्राप्त कर लेने के पश्चात् यह आवश्यकता कम हो जाती है और दिव्यांग सामान्य शिक्षण–संस्थानों या एकीकृत शिक्षण–संस्थानों में भी पढ़ सकते हैं। विशेष विद्यालय आवश्यकतानुसार विशेष उपकरणों और पढ़ाई की पद्धतियों से सुसज्जित होते हैं।*

**KeyWords :** *दिव्यांगता, इतिहास, शिक्षा, क्रांति एवं चुनौती ।*

दिव्यांगों की शिक्षा का इतिहास सदियों पुराना है। सामाजिक चेतना के विकास के साथ दिव्यांगों की शिक्षा के साधन बढ़ते चले गये। दिव्यांगों की शिक्षा का सबसे प्राचीन संदर्भ ईसा पूर्व 1552 में मिश्र में मिलता है जहाँ नेत्रहीन अरबी विद्वान् डिडीमस ने लकड़ी पर निशान बना–बनाकर पुस्तकें लिख डालीं। यह नेत्रहीनों की प्राचीनतम लाइब्रेरी कहलाती है। सोलहवीं शताब्दी से दिव्यांग छात्रों की शिक्षा के प्रयास गम्भीरता से प्रारम्भ हुए। यूरोप में सामाजिक पुनरूद्धार के दौरान और फ्रांसीसी क्रांति के बाद दिव्यांगों की शिक्षा के लिए निश्चित और प्रभावशाली कदम उठाने की बात चलने लगी। अनेक देशों में सामाजिक चिंतक दिव्यांग के लिए बराबरी के अधिकारों की बात करने लगे और दिव्यांगों के लिए विशेष विद्यालयों की चर्चा जोर पकड़ने लगी। फ्रांस के एक डॉक्टर ने फ्रांसीसी क्रांति के दौरान मानसिक रूप से बच्चों के लिए शिक्षा देने की नवीनतम पद्धति पर आधारित एक पुस्तक लिखी। इसी दौरान फादर डीलिप ने फ्रांसीसी

क्रांति से पूर्व श्रवणहीनों के लिए मैन्वल वर्णमाला विकसित की। इसी समय श्रवणहीनों की शिक्षा के लिए जर्मनी के सामुवेल हैनिक नये तरीके ढूँढ़ रहे थे। वाशिंगटन स्थित गलेट कॉलेज में श्रवणहीनों के लिए एक नयी पद्धति ईजाद की गई जो मैन्वल वर्णमाला, निशानों की भाषा और बोलने का सम्मिश्रण थी।

अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक दिव्यांगों के लिए विशेष शिक्षा प्रारम्भ हो गई। सन् 1784 ई0 में विश्व का पहला नेत्रहीन विद्यालय पेरिस में खुला। भारत में विशेष शिक्षा की सुविधा लगभग 100 वर्ष बाद पहुँची। बम्बई में श्रवणहीनों के लिए पहला विद्यालय 1885 में खुला। नेत्रहीनों के लिए पहला विद्यालय 1887 में अमृतसर में खुला। आजादी के पहले भारत में दिव्यांगों के लिए विशेष शिक्षा की सुविधा का विस्तार बहुत धीरे–धीरे और रूक–रूककर हुआ। अविभाजित भारत में नेत्रहीनों के लिए 32 विशेष विद्यालय, श्रवणहीनों के लिए 30 विशेष विद्यालय और मानसिक रूप से दिव्यांगों के लिए मात्र 3 विशेष विद्यालय थे। इन विद्यालयों में पढ़ाई का स्तर भी हल्का था। पर फिर भी इन विद्यालयों और इनमें पढ़ने वाले छात्रों ने साबित कर दिया कि दिव्यांग भी पढ़ सकते हैं। इनमें से अनेक छात्रों ने पहले विशेष विद्यालय में और फिर सामान्य कॉलेज में पढ़कर दिखा दिया कि वे किसी से कम नहीं हैं।

हर प्रकार की दिव्यांगता के शिकार व्यक्तियों को उनकी दिव्यांगता के अनुरूप विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती है। प्रारम्भ में विशेष शिक्षा की आवश्यकता बहुत ज्यादा होती है। एक बार शिक्षा का स्तर प्राप्त कर लेने के पश्चात् यह आवश्यकता कम हो जाती है और दिव्यांग सामान्य शिक्षण–संस्थानों या एकीकृत शिक्षण–संस्थानों में भी पढ़ सकते हैं। विशेष विद्यालय आवश्यकतानुसार विशेष उपकरणों और पढ़ाई की पद्धतियों से सुसज्जित होते हैं।

## नेत्रहीनों के लिए विशेष विद्यालय

नेत्रहीन विद्यालय ब्रेल पर आधारित शिक्षा पर केन्द्रित होते हैं। लुई ब्रेल द्वारा आविष्कृत छः डॉट का उपयोग कर बनाई गई लिपि आज पूरे विश्व में प्रचलित है। इन विद्यालयों में नेत्रहीन बच्चों को सिखाने के लिए विशेष उपकरण होते हैं। इनमें स्पर्श के द्वारा चीजों को समझना या जानना बहुत बारीकी से सिखाया जाता है। उन्हें चलने–फिरने का अच्छा अभ्यास कराया जाता है। उनका आत्मविश्वास बढ़ाने के विशेष प्रयास किये जाते हैं। संगीत नेत्रहीनों के लिए प्रिय विषय होता है और बड़ी संख्या में नेत्रहीन गायन और वादन आसानी से सीखते हैं। इनमें से अनेक इसे पेशा भी बना लेते हैं। नेत्रहीन समाजशास्त्र और सामान्य विज्ञान की पढ़ाई भी आसानी से कर लेते हैं। गणित और उच्च विज्ञान जिनमें प्रैक्टिकल करने की आवश्यकता होती है, अभी तक नेत्रहीनों के बीच लोकप्रिय नहीं हो पाये हैं। दूसरी ओर कुछ सहायक उपकरण लगाकर कम्प्यूटर नेत्रहीनों के लिए आसान होता जा रहा है। अधिकांश नेत्रहीन टाईपराइटर का प्रयोग बड़ी आसानी से कर लेते हैं।

कल्पना कीजिए, आप एक अनजान पहाड़ी इलाके में घूम रहे हों और आपके चारों ओर इस कदर अँधेरा छा जाये कि पसारा हाथ भी न सूझे। इसके साथ ही इस कदर सन्नाटा छा जाये कि दिल की धड़कन भी सुनाई न दे। डर के मारे आप चीखना चाहें, पर आपकी आवाज ही न निकले। ऐसी परिस्थिति में एक कदम भी चल नहीं पाएँगे, क्योंकि आपकी गतिविधि आपको संकट में डाल देगी।

यदि किसी व्यक्ति की ऐसी हालत हो जाए तो उससे लिखने–पढ़ने की अपेक्षा करना ज्यादती लगता है। ऐसे मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास, असाधारण कृतित्व और समाज के लिए योगदान की बात करना तो नामुमकिन–सा लगता

है। पर इस नामुमकिन कार्य को भी मुमकिन कर दिखाया तीन महिलाओं ने। इन महिलाओं ने अपनी एक से अधिक ज्ञानेंद्रियों के निष्क्रिय हो जाने के बावजूद न सिर्फ स्वयं शिक्षा हासिल की वरन् दूसरों को भी शिक्षित और प्रेरित किया और समाज में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया।

दरअसल दिव्यांगों के लिए शिक्षा की व्यवस्था स्वयं भी अपने आप में एक क्रांति थी। अठारहवीं सदी में फ्रांस में प्रसिद्ध क्रांति हुई थी, जिसमें समता, स्वतंत्रता और भाईचारे का नारा दिया गया। इसी दौरान फ्रांस में दो और क्रांतियाँ हुई थीं– एक नेत्रहीनों के लिए विद्यालय की स्थापना और दूसरी बधिरों के लिए सांकेतिक भाषा के विकास द्वारा शिक्षण पद्धति का विकास। अठारहवीं सदी में घटी। इन सब घटनाओं के बाद जब नेत्रहीन पढ़ने लगे और बधिर भी ज्ञान प्राप्त करने लगे तो अनेक सामाजिक चिंतक यह सोचने लगे कि बहुदिव्यांगता के शिकार व्यक्ति किस प्रकार पढ़ सकते हैं।

इस चुनौती को स्वीकार करते हुए एक अठारह वर्षीय युवती, जो न देख सकती थी, न सुन सकती थी और न ही बोल सकती थी, को शिक्षा देने के प्रयोग प्रारम्भ हुए। जूलिया ब्रेस नामक यह लड़की मात्र चार वर्ष की आयु में देखने, सुनने व बोलने की शक्ति खो चुकी थी। काफी मेहनत की गई, पर इस युवती को सिखाना सम्भव नहीं हो पाया। यह निष्कर्ष निकाला गया कि दिव्यांग बालक को दिव्यांगता के तुरन्त बाद यदि शिक्षा दी जाये तो सिखाना आसान होता है। बाद में यह कठिन होता चला जाता है।

इस असफलता के बावजूद प्रख्यात वैज्ञानिक डॉ. सामुवेल ग्रिडले हावे अपने अटल निश्चय से नहीं हिले और उन्होंने 7–8 वर्षीय बालिका लारा ब्रिजमैन, जो अत्यन्त निर्धन परिवार की थी और मात्र दो वर्ष की आयु में देखने, सुनने व बोलने की शक्ति खो चुकी थी, को चुना। वे इस सुन्दर बालिका को अपने परकिंस संस्थान में ले गये और अपने प्रयोग करने लगे। उन्होंने लारा के एक हाथ में चम्मच दी और दूसरे हाथ में एक मोटे कागज पर उभरे हुए अक्षरों में चम्मच लिखकर दिया। उन्होंने लारा को उभरे अक्षरों को स्पर्श कराकर समझाया। इसके बाद यह प्रयोग चाभी, छुरी और अन्य दैनिक जरूरतों की चीजों के साथ दुहराया गया। थोड़े से अभ्यास के बाद लारा इन वस्तुओं को लिखे हुए कागज के टुकड़े से मिला देती थी। वह स्पर्श के द्वारा समझ जाती थी कि कागज पर चम्मच लिखा है या छुरी।

जब लारा शब्द पहचानने लगी तो हर शब्द के अक्षर अलग–अलग पर्ची पर लिखकर दिये जाने लगे। लारा उन अक्षरों को मिलाकर शब्द बनाने लगी। उत्साहित डॉ. हावे इस पूरी प्रक्रिया को अपनी नोटबुक में उसी प्रकार दर्ज करते थे जैसे प्रयोगशाला में वैज्ञानिक दर्ज करता है। लारा अब रोजाना काम आने वाली सभी चीजों को पहचानने लगी। वह अक्षर मिलाकर आसानी से शब्द बनाने लगी। तभी डॉ. हावे ने देखा कि उस बालिका के चेहरे पर अचानक चमक आ गई। उसका ज्ञानदीप जल गया और आत्मविश्वास बढ़ गया। उसने सांकेतिक भाषा सीख ली और विशेष रूप से बनायी गई स्लेट पर लिखने भी लगी। वह उभरे हुए अक्षरों में लिखी पुस्तक पढ़कर, समझकर संकेत की भाषा में उस पर प्रतिक्रिया भी व्यक्त करने लगी। उसने साधारण अंकगणित भी सीख लिया और अन्य दस्तकारी के कार्य करने लगी। वह सुई में धागा तक स्पर्श की सहायता से स्वयं डाल लेती थी।

लारा अपने जीवनकाल में ही चर्चा का विषय बन गई। जहाँ एक ओर कुछ लोग यह कहते थे कि ऐसी लड़की को पढ़ाकर क्या फायदा है और इसमें सिर्फ समय, ऊर्जा और पैसे की बर्बादी है तो दूसरी ओर अनेक लोग सिखाने वाले और सीखने वाले की तारीफों के पुल बाँधने

लगे। प्रसिद्ध ब्रिटिश लेखक चार्ल्स डिकेंस 1842 में परकिंस संस्थान देखने आये तो वे लारा से बहुत प्रभावित हुए और अपने अमेरिकन नोट्स में उन्होंने इस उपलब्धि का विस्तृत वर्णन किया।

लारा ने अपने आलोचकों को मुँहतोड़ उत्तर दिया। शिक्षित होने के बाद वह परकिंस के अन्य निवासियों को शिक्षित होने पर सहायता करने लगी। उन्हीं दिनों ऐनी सलीवान नामक एक नेत्रहीन लड़की परकिंस में आई। ऐनी एक अनाथ लड़की थी, पर उसके मन में बहुत कुछ कर गुजरने की तमन्ना थी। परकिंस में डॉक्टरों ने दो बार उसकी आँखों का ऑपरेशन करके उसे थोड़ा–बहुत देखने लायक बना दिया। दूसरी ओर लारा ब्रिजमैन के सान्निध्य में रहकर उसके ज्ञान–चक्षु भी खुल गये। उसने नेत्रहीन, श्रवणहीन और मूक बच्चों को शिक्षित करने में महारत हासिल की। उसने डॉ. हावे द्वारा लारा पर किये गये प्रयोगों का गहराई से अध्ययन किया। लारा ऐनी को बहुत प्यार करती थी। लारा पर लिखे गये अमेरिकन नोट्स हेलेन कीलर की माता ने पढ़े और परकिंस में सम्पर्क किया। प्रबन्धकों ने ऐनी सलीवान को हेलेन की शिक्षा के लिए भेजा। वृद्ध लारा ने ऐनी को विदा करते हुए अपनी बनाई हुई गुड़िया उपहार में दी, जिसे ऐनी ने हेलेन को पढ़ाए गये पहले पाठ में इस्तेमाल किया।

कीलर–परिवार ने ऐनी का जोरदार स्वागत किया, पर मात्र चंद महीने की आयु में नेत्रहीन, श्रवणहीन व मूक हो गई हेलेन को अपनी शिक्षा कतई पसन्द नहीं आयी। हेलेन अत्यन्त उद्दंड हो चुकी थी। जब वह खाने की टेबल पर बैठती तो दूसरों की प्लेटों से चीजें उठाकर खाने की चेष्टा करती थी, जिससे चीजें फैल जाती थीं। ऐनी ने हेलेन की अनुशासनहीनता को रोकने का प्रयास किया तो हेलेन ने पूरा घर सिर पर उठा लिया। दुखी होकर परिवार के सभी लोग बिना खाये उठ गये। हेलेन जमीन पर लोटने लगी। उसने ऐनी की कुर्सी उलटने का प्रयास किया और खाने की चम्मच फेंककर मारी। और कोई होता तो हार मानकर लौट जाता, पर ऐनी, जिसने अपना बचपन तमाम अभावों और मानसिक रूप से विक्षिप्त बच्चों के साथ अनाथालय में बिताया था, ने हार नहीं मानी। अपने भाई की मृत्यु के बाद बाल अपराधियों के बीच रही ऐनी, कीलर–परिवार में मात्र शोध करने नहीं वरन् नौकरी की सख्त जरूरतवश आयी थी। उसने हेलेन की माता को आश्वस्त किया कि पढ़ाई प्रारम्भ करने से पूर्व हेलेन को अनुशासित बना देगी और इसके लिए वह हेलेन के साथ अलग रहने लगी। इसी बीच लारा की बनायी गुड़िया हेलेन को पसन्द आ गई और वह उससे खेलने लगी।

हेलेन को शिक्षित करने के लिए ऐनी को काफी संघर्ष करना पड़ा। वह धीरे–धीरे हेलेन को स्पर्श के माध्यम से पढ़ाने लगी। वह दैनिक जरूरतों की चीजों को हेलेन के हाथ में देती और उस चीज का नाम अपनी उँगलियों से हेलेन की हथेली पर लिख देती थी। वह हेलेन को अपनी प्रतिक्रिया के लिए प्रेरित करती थी। जब हेलेन सही प्रतिक्रिया देती तो उसे पुरस्कारस्वरूप उसका प्रिय केक खाने को दिया जाता था। एक दिन ऐनी हेलेन को घुमाने ले गई। बाहर एक पानी का पम्प लगा था। ऐनी ने हेलेन का हाथ बहते पानी पर रखा और दूसरे हाथ पर उँगलियों से पानी लिखा। हेलेन ने सही प्रतिक्रिया व्यक्त की। अब शिक्षिका और छात्रा में तालमेल स्थापित हो गया। एक दिन हेलेन ने ऐनी को चूम लिया। हेलेन अब प्रतिमाह 100 शब्द सीखने लगी। ऐनी ने आसपास की चीजों, जैसे पौधों, फूलों, तितलियों और घरेलू पालतू जानवरों को स्पर्श कराकर उसको लिखना सिखाया। अब हेलेन गिनती भी करने लगी।

ऐनी भी डॉ. हावे की तरह अपने प्रयोगों के परिणामों को अपनी नोटबुक में लिखती चली

गई और बाद में ये परिणाम अखबारों में छपे और लोगों ने बहुदिव्यांगता के शिकार बच्चों की शिक्षण–पद्धति को सराहा और अपनाया।

बाद में हेलेन कीलर पत्र लिखने लगी और लगातार पढ़ाई करती चली गई। उसने बोलना भी सीख लिया। ऐनी कॉलेज में हेलेन के साथ जाती थी और लेक्चर सुनकर उँगलियों से हेलेन की हथेली पर लिखती चली जाती थी। बाद में हेलेन ने गले पर उँगलियाँ रखकर सामने वाले व्यक्ति की बात समझना प्रारम्भ कर दिया। हेलेन ने नोबल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ टैगोर के गले पर अपनी उँगलियाँ रखकर उनकी कविताओं का रसास्वादन किया। हेलेन की प्रसिद्धि बढ़ती चली गई, पर ऐनी अपनी कठिन मेहनत के कारण पुनः अस्वस्थ होती चली गई। उसकी दृष्टि पुनः खत्म हो गई, पर अपनी दृष्टि खोने से पूर्व ही उसने अपनी छात्रा को पढ़ना, लिखना और बोलना सिखा दिया।

उपरोक्त तीनों महिलाओं ने यह साबित कर दिया कि जब तोते, कुत्ते, घोड़े आदि को प्रशिक्षित किया जा सकता है तो मनुष्य को भी शिक्षित किया जा सकता है और दिव्यांगता कितनी भी विकराल क्यों न हो, शिक्षा में बाधक नहीं बन सकती।

## संदर्भ ग्रन्थ


1. किचुल, टी.एन. ए सेन्चुरी ऑफ ब्लाइन्ड वेलफेयर इन इण्डिया (1991), पेनमैन पब्लिशर्स, दिल्ली।
2. भारत सरकार, रिपोर्ट आन ब्लाइण्डनेस इन इंडिया (1944), प्रबन्धक प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. हल्दर, आर.एम., द विजुअली हैन्डीकैप्ड इन इण्डिया (1943), थैकर एण्ड कम्पनी लिमिटेड, बम्बई।
4. जेटलिन, एरविंग, आइडियोलाजी एण्ड द डेवलेपमेन्ट ऑफ सोशियोलालिकल थियोरी (1968), प्रेटिंस हाल, न्यू जर्सी।
5. चौहान, आर.एस., हिस्ट्री ऑफ सर्विसेज फॉर विजुअली हैन्डीकैप्ड एजूकेटर, आई.सी.ई.वी.एच. (1992), बोस्टन यू. एस.ए.
6. स्टेटमैन, नवम्बर 27, 1939, दिल्ली।
7. कटसफोर्थ, टामस डी., दी ब्लाइन्ड इन स्कूल एण्ड सोसाइटी, अमेरिकन फाउन्डेशन फार द ब्लाइन्ड (1990), न्यूयार्क